# संपादकीय

अखबारों में छपी एक खबर भविष्य में स्कूली शिक्षा में कुछ नए बदलावों के संकेत दे रही है। इससे यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि भारतीय शिक्षा की भावी दिशा क्या हो सकती है। खबर के अनुसार, राजस्थान के शिक्षामंत्री ने यह घोषणा की है कि नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद उनके 'जीवन और संघर्ष' को जल्द ही पाठ्यपुस्तकों में शामिल किया जाएगा। साथ ही यह कि माध्यमिक स्तर पर अटल बिहारी वाजपेयी को भी शामिल किया जाएगा। शिक्षामंत्री का कहना है कि मोदी ने अपने जीवन में बहुत संघर्ष किया है और उनके जीवन की कहानी बच्चों को जिन्दगी में उच्चतर लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करेगी। इन्हें पाठ्यपुस्तकों में शामिल किए जाने के लिए उनका तर्क है कि जब कांग्रेस के नेताओं, जैसे कि जवाहर लाल नेहरू, इंदिरा गांधी और राजीव गांधी को पाठ्यपुस्तकों में शामिल किया जा सकता है तो दूसरे योग्य नेताओं को भी शामिल किया जा सकता।

हालांकि अभी तक यह स्पष्ट नहीं है कि पाठ्यपुस्तकों में उनके बारे में क्या शामिल किया जाएगा और उसके प्रति क्या नजरिया होगा, फिर भी शिक्षामंत्री के कथन और पाठ्यपुस्तकों की पुरानी संस्कृति से एक अंदाजा लगाया जा सकता है। सवाल यह है कि यदि किसी भी राजनैतिक दल विशेष से जुड़े नेताओं के बारे में पाठ्यपुस्तकों में अध्याय लगाए जा सकते हैं तो फिर नरेन्द्र मोदी या अटल बिहारी वाजपेयी के क्यों नहीं लगाए जाएं? शिक्षा के लिहाज से यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि बच्चों को किसी भी राजनैतिक दल के नेता/नेताओं के बारे में क्यों पढ़ाया जाना चाहिए? अर्थात् उनके बारे में पढ़ाने का मकसद क्या है और वह शिक्षा के किन लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करेगा? यदि थोड़ी देर के लिए मान लें कि पढ़ाया जाना चाहिए तो फिर सवाल है कि उनके बारे में क्या और कैसे पढ़ाया जाए? यानी, किसी नेता या महापुरुष के बारे में पढ़ाए जाने का नजरिया क्या हो?

हमारी पुरानी पाठ्यपुस्तकों में अनेक बार महापुरुषों के व्यक्तित्व और कृतित्व को शामिल किया जाता रहा है और यह विचारधारात्मक बहस का एक कारण भी रहा है। पाठ्यपुस्तकों में शामिल महापुरुषों की जीवनी के अंश जिस तरह प्रस्तुत किए जाते रहे हैं वे उनके अति-मानवीय व्यक्तित्व और महानता को ही सिद्ध करने वाले होते हैं। उनके जीवन से मानवीय द्वंद्व और सामाजिक परिस्थितियां लगभग गायब ही रहती हैं। सामान्यतया इसका मकसद बच्चों को उपदेश की घुट्टी पिलाने का ही होता है और आलोचनात्मक नजरिया तो दूर-दूर तक नहीं होता। यदि इसी तरह से पढ़ाया जाना है तो फिर चाहे महात्मा गांधी को पढ़ाया जाए या नेहरू को या नरेन्द्र मोदी को; इससे कुछ भी हासिल नहीं होने वाला।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 के बाद पाठ्यपुस्तकों के बारे में यह सोच विकसित हुई है कि पाठ्यवस्तु को आलोचनात्मक नजरिए से पेश किया जाए। यानी, यह किसी व्यक्ति की गौरवगाथा मात्र नहीं हो सकता। यदि इसे मान लें तो फिर किसी भी नेता के बारे में पढ़ाया जा सकता है। लेकिन प्रस्तुत प्रसंग में यह सवाल उठता है कि नरेन्द्र मोदी या अटल बिहारी वाजपेयी के जीवन संघर्ष से जुड़ी तमाम अच्छी बातों के साथ क्या बच्चों को वे समस्त प्रसंग भी पढ़ाए जाएंगे जो पिछले 20-25 सालों में भारतीय समाज और राजनीति में चर्चा और चिंता के विषय रहे हैं? फिर चाहे वह बाबरी मस्जिद के ध्वंस के प्रसंग हों या 2002 के गुजरात दंगों में उनकी भूमिका से जुड़े प्रसंग या फिर उस विचारधारा की विशेषताएं जिससे वे आजीवन जुड़े रहे हैं। यदि इतने आलोचनात्मक नजरिए से इन्हें शामिल किया जाए तो शायद किसी को समस्या नहीं होगी लेकिन हम जानते हैं कि ऐसा होने वाला नहीं है। इसका मकसद सिर्फ इन्हें महानायक के तौर पर पेश करना है।

इस खबर के आने से पहले ही भारतीय जनता पार्टी ने अपने चुनावी घोषणापत्र में पाठ्यचर्या और शिक्षण प्रक्रियाओं की पूरी तरह समीक्षा की बात कही है। यह संकेत दर्शाते हैं कि चुनाव परिणामों के बाद यदि भारतीय जनता पार्टी की सरकार बनती है तो भारतीय शिक्षा पुनः उसी दौर से गुजरने वाली है जिसे भारतीय शिक्षा के इतिहास में 'शिक्षा और पाठ्यपुस्तकों के भगवाकरण' का दौर कहा जाता है। ◆